**ओ३म्**

**“विश्व में सत्य की प्रचारक धार्मिक एवं सामाजिक संस्था आर्य समाज”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 सत्य को मानना व उसका प्रचार करना ही धर्म है और जो असत्य है उसे जानना व उसका त्याग करना व कराना भी धर्म ही है। आजकल हम देखते हैं कि संसार अनेक मत-मतान्तर व पंथों से भरा हुआ है। सबकी परस्पर कुछ समान व कुछ असमान मान्यतायें हैं। सबके अपने अपने धर्म ग्रन्थ भी हैं। इनका अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि न इनमें पूर्ण ज्ञान विज्ञान है और न ही इसमें आध्यत्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए पूर्ण या पर्याप्त साधन ही बताये गये हैं। वेद व वैदिक साहित्य इसका अपवाद हैंं। प्रायः सभी मत-मतान्तर मध्यकाल में उत्पन्न हुए जब ज्ञान व विज्ञान अविकसित व अनुन्नत अवस्था में थे। इसी कारण स्वाभाविक रूप से सभी मतों व पन्थों में असत्य व अज्ञान से युक्त मान्यतायें विद्यमान हैं जिन्हें यदि जानकर हटा दिया जाये तो देश व विश्व में शान्ति स्थापित होने के साथ संसार के सभी लोग सुखी हो सकते हैं। मत-मतान्तरों के सभी प्रकार के लड़ाई झगड़े बन्द हो सकते हैं। इनके अनुयायियों में होने वाली हिंसा रूक सकती है। सबमें परस्पर एकता स्थापित हो सकती है। सभी ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानकर व उसके उपासक बनकर स्वहित व स्वकल्याण कर सकते हैं। ऐसा होने पर मनुष्य स्वतः अन्याय, शोषण व अनुचित कार्य छोड़कर सत्य का ग्रहण कर लाभान्वित हो सकते हैं। इन लाभों को भुलाकर सभी मत-मतान्तर अपनी मान्यताओं के सत्यासत्य का विचार ही नहीं करना चाहते? क्यों नहीं चाहते? इसका अनुमान सुधी व विज्ञ जन लगा सकते हैं। इन मतों से लोगों के जो स्वार्थ जुड़े हुए हैं उन्हें वह छोड़ना नहीं चाहते। जब तक ऐसा नहीं होगा, मत-मतान्तरों के झगड़े समाप्त न होंगे, मतान्तरण व धर्मान्तरण बन्द न होगा, हिंसा जारी रहेगी और मनुष्य अपनी समुचित उन्नति नहीं कर सकेगा। विद्या की वृद्धि न होने से मनुष्य ईश्वर व जीवात्मा विषयक सत्य ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण ईश्वर की उपासना व ईश्वरीय कर्म-फल व्यवस्था के विधान को न जानकर अपना मनुष्य जीवन व्यर्थ करता रहेगा। अतः मत-मतान्तरों ने अपने अनुयायियों के मानसिक, आत्मिक और विद्यावृद्धि के कार्य में स्थाई रूप से बाधायें खड़ी कर दी हैं। इनके सुधार की समय सीमा कोई नहीं बता सकता।

वैदिक मत व इतर सनातनी पौराणिक मत आदि में क्या अन्तर है? वैदिक मत वेद की सत्य मान्यताओं पर आधारित धर्म है वहीं महाभारत काल के बाद पतन होने से यह अज्ञान, अन्धविश्वासों से युक्त होने के कारण पौराणिक मत बन गयां। अन्य मतों में जो जो अविद्याजन्य बातें हैं उसका कारण भी सनातनी पौराणिक मत को ही मान सकते हैं। मनुष्य के वस्त्र जब मैले हो जायें तो उन्हें धोकर स्वच्छ करना होता है। इसी प्रकार मनुष्य का शरीर दूषित वायु आदि के सम्पर्क में आकर निरन्तर दूषित होने के कारण उसे प्रतिदिन एक या दो बार स्नान से स्वच्छ करना होता है। इसी प्रकार से धर्म व मत-मतान्तरों को भी सत्य व विद्यारूपी जल से स्नान करने की अपेक्षा रहती है। मत व तथाकथित धर्म क्योंकि विद्या व सत्य विचारों रूपी जल का स्नान नहीं करते इसी कारण उनमें असत्य व अविद्याजन्य मान्यताओं का प्रदूषण हो चुका है। इसको दूर करने के लिए वेद व वैदिक ज्ञान रूपी साहित्य वा साबुन से इनका सुधार व परिष्कार करना आवश्यक है। ऋषि दयानन्द जी ने यही कार्य किया था। इससे लोगों के स्वार्थों को हानि पहुंच रही थी। वह सब उनके विरोधी हो गये। दूसरे व पराये तो विरोधी हुए ही उनके अपने सनातन मत के अनुयायी भी विरोधी हो गये। वह सत्य को सहन नहीं कर सके। सत्य को समझने की शक्ति ही उनमें नहीं थी। इसका जो परिणाम होना था वही हुआ। ऋषि दयानन्द के विरुद्ध षडयन्त्र करके उन्हें कालकूट विष दे दिया गया जिसके कारण 30 अक्तूबर, सन् 1883 को दीपावली के दिन सायं समय उनकी मृत्यु वा बलिदान हो गया। वह तो मोक्ष में चले गये। समाज व देश आंशिक सुधार को प्राप्त तो हुआ परन्तु पौराणिकता, अज्ञान, असत्य मान्यताओं व परम्पराओं का प्रचलन पूर्णतः दूर नहीं हुआ। आजकल श्राद्ध चल रहे हैं। यह श्राद्ध मरे हुये पितरों वा पूर्वजों को भोजन कराने व पहुंचाने का साधन माना जाता है जो कि सर्वथा असम्भव है। यह कल्पना ही गलत व वेद विरुद्ध है। मरे हुए पूर्वजों की आत्मायें अपने कर्मानुसार नया जीवन प्राप्त कर वहां सुख व दुःखों का भोग कर रही हैं। उन्हें भोजन देना मूर्खता है। हमारा भोजन वहां पहुंचता नहीं है। मरे हुए लोगों को श्राद्ध का भोजन पहुंचने का किसी के पास कोई प्रमाण नहीं है। यदि कल्पना कर इसे मान भी लिया जाये तो प्रश्न है कि मरने पर उसका शरीर तो जला दिया या गाढ़ दिया गया, तब उसके हाथ व मुंह आदि अवयव तो नष्ट हो गये, फिर आत्मा बिना मुंह व हाथ आदि के खायेगा कैसे और यदि खा लिया तो पाचन तन्त्र न होने से वह पचेगा कैसे? यह मध्यकालीन भ्रम से उत्पन्न मान्यता प्रतीत होती है। श्राद्ध के स्थान पर कुछ करना ही है तो जीवित माता-पिता, दादी व दादा जी का खूब बढ़चढ़ कर सेवा व सत्कार किया जाना चाहिये। श्राद्ध के समान ही मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्येतिष आदि अन्य मान्यतायें भी वेद, ज्ञान, तर्क व युक्तियों के विरुद्ध होने से त्याज्य हैं। अज्ञान का परिणाम अच्छा कभी नहीं होता, बुरा ही होता है।

अविद्या दूर करने व सत्य का सर्वत्र प्रचार करने के लिए ही ऋषि दयानन्द ने अपने विद्या गुरु प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती की आज्ञा से देशवासियों के समग्र कल्याण के लिए, असत्य के खण्डन व सत्य के मण्डन के सिद्धान्त को अपनाया था। अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि उनका उद्देश्य व लक्ष्य था। वह चाहते थे कि सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में सब परतन्त्र रहें और प्रत्येक हितकारी नियम के पालन करने में स्वतन्त्र रहें। यह आर्यसमाज के नियम हैं परन्तु समाज ने इन्हें भली प्रकार से अपनाया नहीं है। स्वामी जी ने उपदेश व व्याख्यानों द्वारा देश भर में जा जाकर प्रचार किया। उन्होंनें विपक्षी व विधर्मियों से शास्त्रार्थ कर सत्य की स्थापना का भी कार्य किया। स्थाई प्रचार की दृष्टि से उन्होंने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, पंचमहायज्ञविधि, गोकरूणानिधि, व्यवहारभानु, वेदभाष्य आदि के महत् कार्य सम्पन्न किये। हमारा विचार है कि देश व विश्व के लोग यदि निःस्वार्थ भाव से ऋषि दयानन्द जी की वैदिक विचारधारा पर विचार करते तो परस्पर एकता हो जाती, सत्य गौरवान्वित व स्थापित होता, सबकी एक पूजा वा उपासना पद्धति होती, एक ही शिक्षा पद्धति होती जो सबके लिए समान, निःशुल्क व अनिवार्य होती, अविद्या का नाश हो जाता और सभी मनुष्य सगे सम्बन्धियों के समान परस्पर व्यवहार करते। सुख व समृद्धि के साधक सत्य-ज्ञान युग का आरम्भ सर्वत्र होता। साम्प्रदायिक मत-सम्प्रदाय के लोगों का सहयोग न मिलने के कारण एक महद् कार्य होने से रूक गया। हम अनुमान करते हैं कि यदि विश्व में सुख व शान्ति का साम्राज्य स्थापित करना है तो इसके लिए असत्य व अज्ञान को पूर्णतया तिलांजलि देनी होगी। धर्म हो या सामाजिक मान्यतायें या परम्परायें, सभी को सत्य ज्ञान पर स्थापित करना होगा। सभी भले लोगों को सत्य मत को अपनाना चाहिये और असत्य मत व मान्यताओं का त्याग करना चाहिये। यही एक मात्र साधन प्रतीत होता है पूर्ण सत्य की स्थापना का। ऋषि दयानन्द व उनके बाद पहली पीढ़ी के आर्य विद्वानों व नेताओं ने यही कार्य किया जिसका समाज पर अनुकूल प्रभाव भी पड़ा। देश स्वतन्त्र हुआ और सामाजिक विकृतियां पूर्णतया तो नहीं किन्तु आंशिक रूप से इनमें सुधार अवश्य हुआ है। यह काम सम्प्रति मन्द पड़ गया है। इसे तीव्र गति से चलाना चाहिये। सरकार का सहयोग भी इस कार्य में आर्यसमाज व इसकी संस्थाओं को मिलना चाहिये। वेद संसार में शान्ति प्रदान कराने वाला का एक धर्म-वृक्ष है। इसके नीचे जो बैठेगा वह ज्ञानी होगा, सुख व शान्ति प्राप्त करेगा और जन्म-जन्मान्तर में भी उसका कल्याण होगा। इसके विपरीत जीवन बिताने से लाभ क्षणिक व कम तथा हानि अधिक होगी। आर्यसमाज सत्य की प्रचारक धार्मिक व सामाजिक संस्था है। सभी मनुष्यों को इस कार्य में सहयोग देना चाहिये और अपने स्वार्थों के लिए समाज में मतभेद पैदा करने वाले लोगों को अच्छा सबक सिखाना चाहिये। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**